नौटंकी

आदिल सैफी

लोक नाट्यशब्द 'लोक' और 'नाट्य' दो शब्दों के योग से बना है। लोक में प्रचलित कथा, मिथक, आदि का नाट्यरूप में नृत्य, गीत, संवादों के माध्यम से रंगमंच पर अभिनय द्वारा प्रदर्शन 'लोक-नाट्य' कहलाता है।

इसकी उत्पत्ति के संबंध में विद्वानों ने अपने विचार व्यक्त किये हैं-

डॉ. विशेल ने लोकनाट्य की उत्पत्ति कठपुतलियों से मानी है।

डॉ. रिपले इसकी उत्पत्ति मृतक पूजा से मानते हैं।

डॉ. दशरथ ओझा के अनुसार "हिन्दी नाट्य परंपरा का मूल श्रोत यह वन-नाटक ही है, जो स्वांग आदि नाम से प्राचीन रूप में अब तक विद्यमान है।" वेद-पुराण, महाकाव्यों एवं भरतमुनि के नाट्यशास्त्र आदि में भी इसकी उत्पत्ति के श्रोत प्राप्त होते हैं। डॉ. सत्येन्द्र लोक नाट्य को परिभाषित करते हुए लिखते हैं- "लोक रंगमंच का नाट्य संगीतात्मक होता है। गेयता की प्रधानता रहती है। इस गेयता का रूप शास्त्रीय नहीं होता। यह सहज लोक संगीत के तत्वों से युक्त है। नगाड़े जैसे लोकवाद्य का इसमें उपयोग होता है। वेश-भूषा में लोकप्रियता का ध्यान रखा जाता है"।

सारांशतः एक शब्द में कहें तो लोकनाट्य लोक की प्रतिध्वनि होता है। इसके माध्यम से लोक जीवन और लोक संस्कृति को दिखाया जाता है। लोक जीवन से संबंधित समस्त धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक मान्यताओं तथा प्रवृत्तियों की समी क्षा लोकनाट्यों में होती 'नौटंकी' का उद्भव कब और कैसे हुआ, इसको लेकर विद्वानों में मतैक्य नहीं है। कुछ विद्वानों का मानना है कि ब्रज क्षेत्र, विशेष रूप से मथुरा वृंदावन का 'भगत' लोकनाट्य हाथरस में आकर 'स्वांग' हो जाता है और कानपुर में प्रचलित होने वाली नौटंकी के प्रारंभ के पीछे मुख्य भूमिका हाथरस के स्वांग की रही है। जयशंकर प्रसाद जी ने नौटंकी को 'नाटक' का अपभ्रंश रूप माना है। भरतमुनि ने नाट्यशस्त्र में नाटक के एक भेद के रूप में सट्टक का उल्लेख किया है। प्रसादजी सट्टक को नौटंकी की तरह ही लौकिक तमाशा मानते हैं। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी का भी यही मत है। कपिल वात्स्यायन के अनुसार- "रासो, रासक और फाग परंपराओं से सांग, स्वांग, संगीत, ख्याल और नौटंकी जैसी अनेक रंगमंचीय विधाओं का जन्म हुआ"। इस क्रम में डॉ. रामनारायण अग्रवाल के विचार भी महत्वपूर्ण हैं वे लिखते हैं- "उत्तर मध्य युग में उत्तरी भारत में ख्याल गायन परंपरा खूब फली-फूली और इसी ख्याल परंपरा से स्वांग या संगीत के रूप में जब-जब अपने को चौबोल गायकी से जोड़ा तो वह भगत, स्वांग या नौटंकी के नाम से विभिन्न क्षेत्रों में प्रसिद्ध हुई"। नौटंकी के संबंध में कई कथा-किवदंतियाँ सुनने को मिलती हैं पर तथ्य यह है कि मुल्तान की शहजादी नौटंकी के साथ घटित प्रेम प्रसंग ही इन ख्यालों का मुख्य आधार रहा और इन्ही से नौटंकी का बीजारोपण हुआ। स्वतंत्रता पूर्व पंजाब (अब पाकिस्तान का मुल्तान) की लोक कथाओं में इस प्रसंग का उल्लेख मिलता है। पंजाब में नौटंकी नाम

की एक राजकुमारी थी। जिसके संदर्भ में एक किवंदन्ती मिलती है कि फूलसिंह नाम का एक युवक जब देर रात, अपने घर पहुंचा तो उसकी भाभी को दरवाजा खोलने में थोड़ी देर हो गई। इस बात पर फूलसिंह नाराज हो गया। भाभी यह सहन नहीं कर सकी, उन्होंने कहा- तुम तो इतनी जल्दी कर रहे हो मानो नौटंकी को ब्याह लाए हो। फूलसिंह को यह बात लग गई और अंततः नौटंकी से ब्याह कर लाया"। कहीं-कहीं नौटंकी और फूलसिंह का यह प्रेम प्रसंग कुछ इस तरह मिलता है- फूलसिंह ने शिकार खेलकर लौटने के बाद अपनी भाभी से पानी मांगा। भाभी ने पानी देने के स्थान पर व्यंग्य किया- 'जाओ, मुल्तान की राजकुमारी नौटंकी से शादी कर लो'। भाभी की बातें उसके हृदय में इस तरह चुभ गईं कि फूलसिंह राजकुमारी नौटंकी की खोज में मुल्तान पहुँच गया। मुल्तान पहुँचकर राजकुमार फूलसिंह शाही मालिन के द्वारा राजकुमारी नौटंकी के पास एक हार भेजता है। नौटंकी के पूछने पर मालिन कहती है कि यह हार मेरे भांजे की वधू ने बनाया है। राजकुमारी नौटंकी ने जब भांजे की वधू से मिलने की इच्छा जाहिर की तो राजकुमार फूलसिंह स्त्री के वेश में नौटंकी के शयन कक्ष में पहुँच गया। रात में साथ सोने के क्रम में फूलसिंह का यह भेद खुल गया और अंततः दोनों की शादी हो गई। नौटंकी की यह कथा लोक गायकों के मध्य इतनी लोकप्रिय हुई कि इसी शैली पर लिखी गई दूसरी लोक कथाएं नौटंकी कहलाई। श्री जगदीशचंद्र माथुर ने भी नौटंकी को सांग का ही पर्याय मानते हुए इसके पीछे इस प्रसिद्ध प्रेमप्रसंग की ही भूमिका देखी। कालका प्रसाद 'कुसुमाकर' का मत है कि "संभवतः सर्वप्रथम नौटंकी 'हीर राँझा' की कथा थी, जो आज भी पंजाबी लोकगीतों में अपना विशेष महत्त्व रखती है। 11वीं 12वीं शताब्दी में इसका जन्मकाल मानना चाहिए"। अधिकतर विद्वानों का मत यही है कि नौटंकी का जन्म पंजाब में हुआ। कालांतर में नौटंकी अपनी लोकप्रियता के रथ पर आरूढ़ हो यात्रा करते हुए उत्तर प्रदेश और समस्त उत्तर और मध्य भारत में पहुँच गई और यहाँ के कलाकारों ने इसे लोकप्रियता के शिखर पर पहुंचाया। इन कलाकारों में प्रमुखतः से पं. नथाराम शर्मा गौड़, कनौज के त्रिमोहन, कानपुर के श्रीकृष्ण पहलवान, गुलाब बाई, के नाम लिए जाते हैं।

नौटंकी के दो अखाड़े प्रसिद्ध हैं। एक हाथरस का अखाड़ा और दूसरा कानपुर का अखाड़ा। हाथरस और कानपुर नौटंकी के गढ़ कहे जाते हैं। हाथरस और कानपुर नौटंकी की अपनी विशिष्ट अभिनय- शैली, कथोपकथन, भाषा-संवाद, शिल्प आदि रही है। इसलिए यहाँ की नौटंकियाँ इन्हीं स्थानों के नाम से पुकारी जाती हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि हाथरस के 'स्वांग' को 1910 के आसपास कानपुर में 'नौटंकी' की संज्ञा से अभिहित किया गया और जिसका श्रेय वे मैकू उस्ताद को देते हैं। "मैकू उस्ताद ने इस खेल के समय बीच में नक्कारा रख कर उसके चारों ओर 12 'झीलें' रखीं। प्रदर्शन के समय वे 12 'झालों' पर अपनी 'चौबें' घुमाकर अंत में नक्कारे पर टंकार लगाते थे। यह एक नवीन प्रयोग अथवा नवीन टंकार थी, जिसके कारण इस नव-टंकार वाले खेल को कानपुर में 'नौटंकी' नाम मिला"। इसमें हाथरसी शैली की नौटंकी के प्रवर्तक पं. नाथूराम शर्मा गौड़ तथा कानपुर शैली नौटंकी के श्रीकृष्ण पहलवान कहे जाते हैं। नाथूराम शर्मा गौड़ जो उस्ताद 'इंदरमन' अखाड़े की परंपरा के हाथरस निवासी स्वांग लेखक, गायक एवं अभिनेता थे। इनके नाम को नौटंकी की दुनिया में बड़े अदर और गर्व से लिया जाता है। इन्होंने स्वांग की इस परंपरा को निरंतर प्रवाहमय बनाए रखा। यह हाथरसी स्वांग परंपरा जनमानस को रंजित करती हुई न केवल ब्रज

क्षेत्र अपितु सम्पूर्ण भारत में प्रवाहमान है। हाथरस शैली नौटंकी में गायिकी पर विशेष जोर दिया जाता है। जबकि कानपुर शैली नौटंकी में अभिनय को तरजीह दी जाती है। कानपुर शैली नौटंकी की नाट्यभाषा में उर्दू का समावेश अधिक रहता है। जबकि हाथरसी नौटंकी में इसका समावेश बहुत कम होता है, इसमें देशी एवं क्षेत्रीय भाषा का अधिक प्रयोग होता है। कानपुर शैली नौटंकी पर पारसी रंगमंच का प्रभाव दिखता है। जबकि हाथरस शैली नौटंकी इसके प्रभाव से बची रही। बल्कि कहा जाए तो प्रारम्भिक दौर में पारसी रंगमंच खुद 'स्वांग' से प्रभावित नज़र आता है। पारसी रंगमंच पर हमेशा 'स्वांग' की शैली के गीतों और कथानकों का स्वागत किया गया। इंदर सभा, लैला मजनू, रामायण और महाभारत के कथानक, सत्य हरिश्चन्द्र आदि पारसी रंगमंच पर छाए रहे।

नौटंकी एक दौर में मनोरंजन का प्रमुख और प्रबल माध्यम रही है। नौटंकी का फलक बहुत ही विस्तृत रहा है। अभी कुछ 4-5 दशकों से नौटंकी का प्रभाव कुछ कम हुआ है। इन्हीं कुछ दशकों में दर्शकों को रिझाने के फलस्वरूप इसमें कुछ विकृतियाँ भी आ गईं हैं। कुछ क्षेत्रों में इन विकृतियों के रूप में अश्लीलता प्रमुख रूप से दिखाई देती है। जिसके परिणाम स्वरूप नौटंकी की लोकप्रियता में कमी आई है। प्रारम्भिक दौर में नौटंकी में विभिन्न विषयों जैसे- प्रेमप्रसंग, नैतिक मूल्य, सामाजिक रूढ़ि एवं बुराई, सरकारी योजनाएँ तथा राजनीति और देशभक्ति को स्थान दिया जाता था। जिसके माध्यम से न सिर्फ़ लोक को रंजित किया जाता था बल्कि कर्तव्यपालन की प्रेरणा एवं सामाजिक मूल्यों का बोध कराया जाता था। इस संदर्भ में कुछ उद्धरण दृष्टव्य है-

"अपने हक़ में लैना हराम रिश्वत है।

वह नौकर नमकहराम जिसैं यह लत है।

बदमाश लोभ में मुझे फँसाता है।

चलहट आगे को क्यों ज्यादा बात बनाता है" ।।

सांगीत 'सरवर नीर' का एक उद्धरण है जिसमें व्यक्ति को सत्कर्म करने की ओर प्रेरित किया गया है।

"जिसने पाला धरम उन्होंने अच्छा ही फल पाया है। परमेश्वर ने आज धरम का बेड़ा पार लगाया है"।

दहेज में धन लेने-देने का हम अत्याचार मिटाएंगे।

सामाजिक कुप्रथाओं पर भी बहुत-सी नौटंकी लिखी गई हैं, इस संदर्भ में एक उद्धरण देखा जा सकता है- "भारत के हम युवक वीर हैं, आगे कदम बढ़ाएंगे, नई रोशनी नई आस हम दुनिया को दिखाएंगे। जाति-पाँति का भेद मिटाकर सबको गले लगाएंगे। प्रेम परस्पर में लहरा दो, आज नक्कारा फिर बजवा दो"। कनक रतन जैन जी द्वारा रचित नौटंकी 'दहेज का दर्द' में दहेज जैसी कुप्रथा को समाप्त करने का आह्वान किया गया है। लेकिन वर्तमान समय में इस तरह की नौटंकी बहुत कम देखने में आती हैं। जिसके फलस्वरूप नौटंकी की लोकप्रियता घट रही है। इसकी लोकप्रियता कम होने के पीछे मनोरंजन के

अन्य माध्यम भी रहे हैं जैसे टेलीविजन, सिनेमा, वेब सीरीज, मोबाइल फोन आदि के कारण लोगों की रुचि नौटंकी जैसी विधाओं के प्रति घट रही है। हमें नौटंकी जैसी प्राचीन लोक कलाओं को जीवित रखने के लिए उसमें समाज के बदलते स्वरूप के अनुसार परिवर्तन करने की आवश्यकता है, जिससे इस ओर फिर से लोगों की रुचि जगे। नौटंकी जैसी लोक कला वर्तमान समय में विलुप्ति के किनारे पर खड़ी हुई हैं। इन्हें बचाए रखने के लिए नौटंकी जैसी लोक कलाओं पर गंभीर अध्ययन किया जाना चाहिए।

आदिल सैफी

शोधार्थी (पीएच.डी.), हिन्दी विभाग,

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली